भारतेन्दु हरिश्चंद्र

भारतीय लेखक (1850-1885)

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (9 सितंबर 1850-6 जनवरी 1885) आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह कहे जाते हैं। वे हिन्दी में आधुनिकता के पहले रचनाकार थे। इनका मूल नाम 'हरिश्चन्द्र' था, 'भारतेन्दु' उनकी उपाधि थी। उनका कार्यकाल युग की सन्धि पर खड़ा है। उन्होंने रीतिकाल की विकृत सामन्ती संस्कृति की पोषक वृत्तियों को छोड़कर स्वस्थ परम्परा की भूमि अपनाई और नवीनता के बीज बोये। हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में प्रसिद्ध भारतेन्दु जी ने देश की गरीबी, पराधीनता, शासकों के अमानवीय शोषण का चित्रण को ही अपने साहित्य का लक्ष्य बनाया। हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की दिशा में उन्होंने अपनी प्रतिभा का उपयोग किया। ब्रिटिश राज की शोषक प्रकृति का चित्रण करने वाले उनके लेखन के लिए उन्हें युग चारण माना जाता है।[1]

भारतेन्दु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। हिन्दी पत्रकारिता, नाटक और काव्य के क्षेत्र में उनका बहुमूल्य योगदान रहा। हिन्दी में नाटकों का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। भारतेन्दु के नाटक लिखने की शुरुआत बंगला के विद्यासुन्दर (1867) नाटक के अनुवाद से होती है। यद्यपि नाटक उनके पहले भी लिखे जाते रहे किन्तु नियमित रूप से खड़ीबोली में अनेक नाटक लिखकर भारतेन्दु ने ही हिन्दी नाटक की नींव को सुदृढ़ बनाया।[2] उन्होंने 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका', 'कविवचनसुधा' और 'बाला बोधिनी' पत्रिकाओं का संपादन भी किया। वे एक उत्कृष्ट कवि, सशक्त व्यंग्यकार, सफल नाटककार, जागरूक पत्रकार तथा ओजस्वी गद्यकार थे। इसके अलावा वे लेखक, कवि, सम्पादक, निबन्धकार, एवं कुशल वक्ता भी थे।[3] भारतेन्दु जी ने मात्र चौंतीस वर्ष की अल्पायु में ही विशाल साहित्य की रचना की। उन्होंने मात्रा और गुणवत्ता की दृष्टि से इतना लिखा और इतनी दिशाओं में काम किया कि उनका समूचा रचनाकर्म पथदर्शक बन गया।

उन्होंने अंग्रेज़ी शासन के तथाकथित न्याय, जनतंत्र और उनकी सभ्यता का पर्दाफाश किया। उनके इस कार्य की सराहना करते हुए डा. रामविलास शर्मा ने लिखते हैं- [1]

> ' देश के रूढ़िवाद का खंडन करना और महंतों, पंडे-पुरोहितों की लीला प्रकट करना निर्भीक पत्रकार हरिश्चन्द्र का ही काम था। '

जीवन परिचय

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म ९ सितम्बर, १८५० को काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ।[3] उनके पिता गोपालचंद्र एक अच्छे कवि थे और 'गिरधरदास'उपनाम से कविता लिखा करते थे। १८५७ में प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय उनकी आयु ७ वर्ष की होगी। ये दिन उनकी आँख खुलने के थे। भारतेन्दु का कृतित्व साक्ष्य है कि उनकी आँखें एक बार खुलीं तो बन्द नहीं हुईं। उनके पूर्वज अंग्रेज-भक्त थे, उनकी ही कृपा से धनवान हुये थे। हरिश्चंद्र पाँच वर्ष के थे तो माता की मृत्यु और दस वर्ष के थे तो पिता की मृत्यु हो गयी। इस प्रकार बचपन में ही माता-पिता के सुख से वंचित हो गये। विमाता ने खूब सताया। बचपन का सुख नहीं मिला।[4] शिक्षा की व्यवस्था प्रथापालन के लिए होती रही। संवेदनशील व्यक्ति के नाते उनमें स्वतन्त्र रूप से देखने-सोचने-समझने की आदत का विकास होने लगा। पढ़ाई की विषय-वस्तु और पद्धति से उनका मन उखड़ता रहा। क्वींस कॉलेज, बनारस में प्रवेश लिया, तीन-चार वर्षों तक कॉलेज आते-जाते रहे पर यहाँ से मन बार-बार भागता रहा। स्मरण शक्ति तीव्र थी, ग्रहण क्षमता अद्भुत।

इसलिए परीक्षाओं में उत्तीर्ण होते रहे। बनारस में उन दिनों अंग्रेजी पढ़े-लिखे और प्रसिद्ध लेखक - राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' थे, भारतेन्दु शिष्य भाव से उनके यहाँ जाते। उन्हीं से अंग्रेजी सीखी। भारतेन्दु ने स्वाध्याय से संस्कृत, मराठी, बंगला, गुजराती, पंजाबी, उर्दू भाषाएँ सीख लीं।

उनको काव्य-प्रतिभा अपने पिता से विरासत के रूप में मिली थी। उन्होंने पांच वर्ष की अवस्था में ही निम्नलिखित दोहा बनाकर अपने पिता को सुनाया और सुकवि होने का आशीर्वाद प्राप्त किया-

> **लै ब्योढ़ा ठाढ़े भए श्री अनिरुद्ध सुजान।**
> **बाणासुर की सेन को हनन लगे भगवान॥**

धन के अत्यधिक व्यय से भारतेंदु जी ऋणी बन गए और दुश्चिंताओं के कारण उनका शरीर शिथिल होता गया। परिणाम स्वरूप १८८५ में अल्पायु में ही मृत्यु ने उन्हें ग्रस लिया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	
भारत INDIA / भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 1850-1885 BHARATENDU HARISHCHANDRA 1976 25 — भारतेन्दु	
जन्म	9 सितम्बर, 1850 वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत
मृत्यु	6 जनवरी, 1885 वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत
पेशा	कवि लेखक,रंगकर्मी, देशहितचिन्तक पत्रकार
राष्ट्रीयता	भारतीय
काल	आधुनिक काल
विधा	नाटक, काव्यकृतियाँ, अनुवाद, निबन्ध संग्रह
विषय	आधुनिक हिन्दी साहित्य
उल्लेखनीय काम	अन्धेर नगरी, भारत दुर्दशा
आधुनिक हिन्दी साहित्य के पितामह	

साहित्यिक परिचय (https://www.hindwi.org/poets/bharatendu-harishchandra)

भारतेन्दु के वृहत साहित्यिक योगदान के कारण ही १८५७ से १९०० तक के काल को भारतेन्दु युग के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार,

> *भारतेन्दु अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के बल से एक ओर तो पद्माकर, द्विजदेव की परम्परा में दिखाई पड़ते थे, तो दूसरी ओर बंग देश के माइकेल और हेमचन्द्र की श्रेणी में। प्राचीन और नवीन का सुन्दर सामंजस्य भारतेन्दु की कला का विशेष माधुर्य है।*

पंद्रह वर्ष की अवस्था से ही भारतेन्दु ने साहित्य सेवा प्रारम्भ कर दी थी। अठारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने 'कविवचनसुधा' नामक पत्रिका निकाली, जिसमें उस समय के बड़े-बड़े विद्वानों की रचनाएं छपती थीं। वे बीस वर्ष की अवस्था में ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट बनाए गए और आधुनिक हिन्दी साहित्य के जनक के रूप मे प्रतिष्ठित हुए। उन्होंने 1868 में 'कविवचनसुधा', 1873 में 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' और 1874 में स्त्री शिक्षा के लिए 'बाला बोधिनी' नामक पत्रिकाएँ निकालीं। साथ ही उनके समांतर साहित्यिक संस्थाएँ भी खड़ी कीं। वैष्णव भक्ति के प्रचार के लिए उन्होंने 'तदीय समाज' की स्थापना की थी। राजभक्ति प्रकट करते हुए भी, अपनी देशभक्ति की भावना के कारण उन्हें अंग्रेज़ी हुकूमत का कोपभाजन बनना पड़ा। उनकी लोकप्रियता से प्रभावित होकर काशी के विद्वानों ने १८८० में उन्हें 'भारतेंदु'(भारत का चंद्रमा) की उपाधि प्रदान की।[4] हिन्दी साहित्य को भारतेन्दु की देन भाषा तथा साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में है। भाषा के क्षेत्र में उन्होंने खड़ी बोली के उस रूप को प्रतिष्ठित किया जो उर्दू से भिन्न है और हिन्दी क्षेत्र की बोलियों का रस लेकर

संवर्धित हुआ है। इसी भाषा में उन्होंने अपने सम्पूर्ण गद्य साहित्य की रचना की। साहित्य सेवा के साथ-साथ भारतेंदु जी की समाज-सेवा भी चलती रही। उन्होंने कई संस्थाओं की स्थापना में अपना योग दिया। दीन-दुखियों, साहित्यिकों तथा मित्रों की सहायता करना वे अपना कर्तव्य समझते थे।

प्रमुख कृतियाँ

मौलिक नाटक[5]

- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (१८७३ई., प्रहसन)
- पांचवें पैगंबर (१८७३)
- प्रेमजोगिनी (१८७५, प्रथम अंक में चार गर्भांक, नाटिका)
- भारत दुर्दशा (१८८०, ब्रजरत्नदास के अनुसार १८७६, नाट्य रासक), लास्य रूपक
- श्री चंद्रावली (१८७६, नाटिका)
- विषस्य विषमौषधम् (१८७६, भाण)
- अंधेर नगरी (१८८१, प्रहसन)
- नीलदेवी (१८८१, ऐतिहासिक गीति रूपक)।
- सती प्रताप (१८८३,अपूर्ण, केवल चार दृश्य, गीतिरूपक, बाबू राधाकृष्णदास ने पूर्ण किया)

अनूदित नाट्य रचनाएँ

- विद्यासुन्दर (१८६८,नाटक, संस्कृत 'चौरपंचाशिका' के यतीन्द्रमोहन ठाकुर कृत बँगला संस्करण का हिंदी अनुवाद)
- पाखण्ड विडम्बन (कृष्ण मिश्र कृत 'प्रबोधचंद्रोदय' नाटक के तृतीय अंक का अनुवाद)
- धनंजय विजय (१८७३, व्यायोग, कांचन कवि कृत संस्कृत नाटक का अनुवाद)
- कर्पूर मंजरी (१८७५, सट्टक, राजशेखर कवि कृत प्राकृत नाटक का अनुवाद)
- भारत जननी (१८७७,नाट्यगीत, बंगला की 'भारतमाता'के हिंदी अनुवाद पर आधारित)
- मुद्राराक्षस (१८७८, विशाखदत्त के संस्कृत नाटक का अनुवाद)
- दुर्लभ बंधु (१८८०, शेक्सपियर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का अनुवाद)

निबंध संग्रह

- नाटक
- कालचक्र (जर्नल)
- लेवी प्राण लेवी

- भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?
- कश्मीर कुसुम
- जातीय संगीत
- संगीत सार
- हिंदी भाषा
- स्वर्ग में विचार सभा

निबंध

पुरातत्व संबंधी 1. रामायण का समय 2. काशी 3. मणिकर्णिका	**इतिहास संबंधी** 4. कश्मीर कुसुम 5. बादशाह दर्पण 6. उदयपुरोदय	**कला संबंधी** 7. संगीत सार 8. जातीय संगीत	**धर्म संबंधी** 9. तदीयसर्वस्व 10. वैष्णवता और भारतवर्ष	**विचारात्मक निबंध** 11. नाटकों का इतिहास	**भावात्मक निबंध** 12. सूर्योदय	**आत्मव्यंजक निबंध** 13. ईश्वर बड़ा विलक्षण है	**वर्णनात्मक निबंध** 14. बसंत 15. ग्रीष्म ऋतु 16. वर्षा काल 17. बद्रीनाथ की यात्रा	**कथात्मक निबंध** 18. एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न

काव्यकृतियां

- भक्तसर्वस्व (1870)
- प्रेममालिका (१८७१),
- कार्तिक स्नान
- वैशाख महात्म्य
- प्रेम सरोवर
- प्रेमाश्रुवर्षण
- जैन कुतूहल
- प्रेम सतसई श्रृंगार
- प्रेम माधुरी (१८७५),
- प्रेम-तरंग (१८७७),

- उत्तरार्द्ध भक्तमाल (१८७६-७७),
- प्रेम-प्रलाप (१८७७),
- होली (१८७९),
- मधु मुकुल (१८८१),
- राग-संग्रह (१८८०),
- वर्षा-विनोद (१८८०),
- विनय प्रेम पचासा (१८८१),
- फूलों का गुच्छा- खड़ीबोली काव्य (१८८२)
- प्रेम फुलवारी (१८८३)
- कृष्णचरित्र (१८८३)
- प्रातः स्मरण
- उरेहना
- तन्मय लीला
- दानलीला
- रानी छद्म लीला
- संस्कृत लावनी
- बसंत
- मुंह दिखावनी
- उर्दू का स्यापा
- प्रबोधिनी
- नये ज़माने की मुकरी
- सुमनांजलि
- बन्दर सभा (हास्य व्यंग्य)
- बकरी विलाप (हास्य व्यंग्य)
- विजय वल्लरी
- विजयिनी विजय वैजयंती
- जातीय संगीत

- रिपुनाष्टक

कहानी

अद्भुत अपूर्व स्वप्न

यात्रा वृत्तान्त

- सरयूपार की यात्रा
- लखनऊ

आत्मकथा

एक कहानी- कुछ आपबीती, कुछ जगबीती

उपन्यास

- पूर्णप्रकाश
- चन्द्रप्रभा

वर्ण्य विषय

भारतेंदु जी की यह विशेषता रही कि जहां उन्होंने ईश्वर भक्ति आदि प्राचीन विषयों पर कविता लिखी वहां उन्होंने समाज सुधार, राष्ट्र प्रेम आदि नवीन विषयों को भी अपनाया। भारतेंदु की रचनाओं में अंग्रेजी शासन का विरोध, स्वतंत्रता के लिए उद्दाम आकांक्षा और जातीय भावबोध की झलक मिलती है। सामन्ती जकड़न में फंसे समाज में आधुनिक चेतना के प्रसार के लिए लोगों को संगठित करने का प्रयास करना उस जमाने में एक नई ही बात थी। उनके साहित्य और नवीन विचारों ने उस समय के तमाम साहित्यकारों और बुद्धिजीवियों को झकझोरा और उनके इर्द-गिर्द राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत लेखकों का एक ऐसा समूह बन गया जिसे भारतेन्दु मंडल के नाम से जाना जाता है।

विषय के अनुसार उनकी कविता शृंगार-प्रधान, भक्ति-प्रधान, सामाजिक समस्या प्रधान तथा राष्ट्र प्रेम प्रधान है।

शृंगार रस प्रधान भारतेंदु जी ने शृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का सुंदर चित्रण किया है। वियोगावस्था का एक चित्र देखिए-

> देख्यो एक बारहूं न नैन भरि तोहि याते
> जौन जौन लोक जैहें तही पछतायगी।
> बिना प्रान प्यारे भए दरसे तिहारे हाय,
> देखि लीजो आंखें ये खुली ही रह जायगी।

भक्ति प्रधान भारतेंदु जी कृष्ण के भक्त थे और पुष्टि मार्ग के मानने वाले थे। उनको कविता में सच्ची भक्ति भावना के दर्शन होते हैं। वे कामना करते हैं -

बोल्यों करै नूपुर स्त्रीननि के निकट सदा
पद तल मांहि मन मेरी बिहरयौ करै।
बाज्यौ करै बंसी धुनि पूरि रोम-रोम,
मुख मन मुस्कानि मंद मनही हास्यौ करै।

सामाजिक समस्या प्रधान भारतेंदु जी ने अपने काव्य में अनेक सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों पर तीखे व्यंग्य किए। महाजनों और रिश्वत लेने वालों को भी उन्होंने नहीं छोड़ा-

चूरन अमले जो सब खाते,
दूनी रिश्वत तुरत पचाते।
चूरन सभी महाजन खाते,
जिससे जमा हजम कर जाते।

राष्ट्र-प्रेम प्रधान भारतेंदु जी के काव्य में राष्ट्र-प्रेम भी भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। भारत के प्राचीन गौरव की झांकी वे इन शब्दों में प्रस्तुत करते हैं -

भारत के भुज बल जग रच्छित,
भारत विद्या लहि जग सिच्छित।
भारत तेज जगत विस्तारा,
भारत भय कंपिथ संसारा।

प्राकृतिक चित्रण प्रकृति चित्रण में भारतेंदु जी को अधिक सफलता नहीं मिली, क्योंकि वे मानव-प्रकृति के शिल्पी थे, बाह्य प्रकृति में उनका मर्मपूर्ण रूपेण नहीं रम पाया। अतः उनके अधिकांश प्रकृति चित्रण में मानव हृदय को आकर्षित करने की शक्ति का अभाव है। चंद्रावली नाटिका के यमुना-वर्णन में अवश्य सजीवता है तथा उसकी उपमाएं और उत्प्रेक्षाएं नवीनता लिए हुए हैं-

कै पिय पद उपमान जान यह निज उर धारत,
कै मुख कर बहु भृंगन मिस अस्तुति उच्चारत।
कै ब्रज तियगन बदन कमल की झलकत झांईं,
कै ब्रज हरिपद परस हेतु कमला बहु आईं॥

प्रकृति वर्णन का यह उदहारण देखिये, जिसमे युमना की शोभा कितनी दर्शनीय है-

तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये ।
झुके कूल सों जल परसन हित मनहूँ सुहाये॥

भाषा

भारतेन्दु के समय में राजकाज और संभ्रांत वर्ग की भाषा फारसी थी। वहीं, अंग्रेजी का वर्चस्व भी बढ़ता जा रहा था। साहित्य में ब्रजभाषा का बोलबाला था। फारसी के प्रभाव वाली उर्दू भी चलन में आ गई थी। ऐसे समय में भारतेन्दु ने लोकभाषाओं और फारसी से मुक्त उर्दू के आधार पर खड़ी बोली का विकास किया। आज जो हिंदी हम लिखते-बोलते हैं, वह भारतेंदु की ही देन है। यही कारण

है कि उन्हें आधुनिक हिंदी का जनक माना जाता है। केवल भाषा ही नहीं, साहित्य में उन्होंने नवीन आधुनिक चेतना का समावेश किया और साहित्य को 'जन' से जोड़ा।

भारतेन्दु की रचनाधर्मिता में दोहरापन दिखता है। कविता जहां वे ब्रज भाषा में लिखते रहे, वहीं उन्होंने बाकी विधाओं में सफल हाथ खड़ी बोली में आजमाया। सही मायने में कहें तो भारतेंदु आधुनिक खड़ी बोली गद्य के उन्नायक हैं।

भारतेन्दु जी के काव्य की भाषा प्रधानतः ब्रज भाषा है। उन्होंने ब्रज भाषा के अप्रचलित शब्दों को छोड़ कर उसके परिकृष्ट रूप को अपनाया। उनकी भाषा में जहां-तहां उर्दू और अंग्रेज़ी के प्रचलित शब्द भी जाते हैं।

उनके गद्य की भाषा सरल और व्यवहारिक है। मुहावरों का प्रयोग कुशलतापूर्वक हुआ है।

शैली

भारतेंदु जी के काव्य में निम्नलिखित शैलियों के दर्शन होते हैं -

१. रीति कालीन रसपूर्ण अलंकार शैली - शृंगारिक कविताओं में,

२. भावात्मक शैली - भक्ति के पदों में,

३. व्यंग्यात्मक शैली - समाज-सुधार की रचनाओं में,

४. उद्बोधन शैली - देश-प्रेम की कविताओं में।

रस

भारतेंदु जी ने लगभग सभी रसों में कविता की है। शृंगार और शान्त रसों की प्रधानता है। शृंगार के दोनों पक्षों का भारतेंदु जी ने सुंदर वर्णन किया है। उनके काव्य में हास्य रस की भी उत्कृष्ट योजना मिलती है।

छन्द

भारतेंदु जी ने अपने समय में प्रचलित प्रायः सभी छंदों को अपनाया है। उन्होंने केवल हिंदी के ही नहीं उर्दू, संस्कृत, बंगला भाषा के छंदों को भी स्थान दिया है। उनके काव्य में संस्कृत के वसंत तिलका, शार्दूल विक्रीड़ित, शालिनी आदि हिंदी के चौपाई, छप्पय, रोला, सोरठा, कुंडलियाँ, कवित्त, सवैया, घनाक्षरी आदि, बंगला के पयार तथा उर्दू के रेखता, ग़ज़ल छंदों का प्रयोग हुआ है। इनके अतिरिक्त भारतेंदु जी कजली, ठुमरी, लावनी, मल्हार, चैती आदि लोक छंदों को भी व्यवहार में लाए हैं।

अलंकार

अलंकारों का प्रयोग भारतेंदु जी के काव्य में सहज रूप से हुआ है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक और संदेह अलंकारों के प्रति भारतेंदु जी की अधिक रुचि है। शब्दालंकारों को भी स्थान मिला है। निम्न पंक्तियों में उत्प्रेक्षा और अनुप्रास अलंकार की योजना स्पष्ट दिखाई देती है:

> तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाए।
> झुके कूल सों जल परसन हित मनहु सुहाए॥

महत्त्वपूर्ण कार्य

नवीन साहित्यिक चेतना और स्वभाषा प्रेम का सूत्रपात

आधुनिक हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु जी का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। वे बहूमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि सभी क्षेत्रों में उनकी देन अपूर्व है। वे हिंदी में नव जागरण का संदेश लेकर अवतरित हुए। उन्होंने हिंदी के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण कार्य किया। भाव, भाषा और शैली में नवीनता तथा मौलिकता का समावेश करके उन्हें आधुनिक काल के अनुरूप बनाया। आधुनिक हिंदी के वे जन्मदाता माने जाते हैं। हिंदी के नाटकों का सूत्रपात भी उन्हीं के द्वारा हुआ।

भारतेन्दु अपने समय के साहित्यिक नेता थे। उनसे कितने ही प्रतिभाशाली लेखकों को जन्म मिला। मातृ-भाषा की सेवा में उन्होंने अपना जीवन ही नहीं सम्पूर्ण धन भी अर्पित कर दिया। हिंदी भाषा की उन्नति उनका मूलमंत्र था -

> **निज भाषा उन्नति लहै सब उन्नति को मूल।**
> **बिन निज भाषा ज्ञान के मिटे न हिय को शूल॥**[3][6]
>
> **विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।**
> **सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार॥**

१८८२ में शिक्षा आयोग (हन्टर कमीशन) के समक्ष अपनी गवाही में हिन्दी को न्यायालयों की भाषा बनाने की महत्ता पर उन्होने कहा-

> *यदि हिन्दी अदालती भाषा हो जाए, तो सम्मन पढ़वाने, के लिए दो-चार आने कौन देगा, और साधारण-सी अर्जी लिखवाने के लिए कोई रुपया-आठ आने क्यों देगा। तब पढ़ने वालों को यह अवसर कहाँ मिलेगा कि गवाही के सम्मन को गिरफ्तारी का वारंट बता दें। सभी सभ्य देशों की अदालतों में उनके नागरिकों की बोली और लिपि का प्रयोग किया जाता है। यही (भारत) ऐसा देश है जहाँ अदालती भाषा न तो शासकों की मातृभाषा है और न प्रजा की। यदि आप दो सार्वजनिक नोटिस, एक उर्दू में, तथा एक हिंदी में, लिखकर भेज दें तो आपको आसानी से मालूम हो जाएगा कि प्रत्येक नोटिस को समझने वाले लोगों का अनुपात क्या है। जो सम्मन जिलाधीशों द्वारा जारी किये जाते हैं उनमें हिंदी का प्रयोग होने से रैयत और जमींदार को हार्दिक प्रसन्नता प्राप्त हुई है। साहूकार और व्यापारी अपना हिसाब-किताब हिंदी में रखते हैं। स्त्रियाँ हिंदी लिपि का प्रयोग करती हैं। पटवारी के कागजात हिंदी में लिखे जाते हैं और ग्रामों के अधिकतर स्कूल हिंदी में शिक्षा देते हैं।*[7]

इसी सन्दर्भ में १८६८ ई में 'उर्दू का स्यापा' नाम से उन्होने एक व्यंग्य कविता लिखी-

> *है है उर्दू हाय हाय । कहाँ सिधारी हाय हाय ।*

मेरी प्यारी हाय हाय । मुंशी मुल्ला हाय हाय ।
बल्ला बिल्ला हाय हाय । रोये पीटें हाय हाय ।
टाँग घसीटैं हाय हाय । सब छिन सोचैं हाय हाय ।
डाढ़ी नोचैं हाय हाय । दुनिया उल्टी हाय हाय ।
रोजी बिल्टी हाय हाय । सब मुखतारी हाय हाय ।
किसने मारी हाय हाय । खबर नवीसी हाय हाय ।
दाँत पीसी हाय हाय । एडिटर पोसी हाय हाय ।
बात फरोशी हाय हाय । वह लस्सानी हाय हाय ।
चरब-जुबानी हाय हाय । शोख बयानि हाय हाय ।
फिर नहीं आनी हाय हाय ।

अपनी इन्हीं कार्यों के कारण भारतेन्दु हिन्दी साहित्याकाश के एक दैदीप्यमान नक्षत्र बन गए और उनका युग भारतेन्दु युग के नाम से प्रसिद्ध हुआ। हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, कविवचनसुधा, हरिश्चन्द्र मैग्जीन, स्त्री बाला बोधिनी जैसे प्रकाशन उनके विचारशील और प्रगतिशील सम्पादकीय दृष्टिकोण का परिचय देते हैं।

साम्राज्य-विरोधी चेतना तथा स्वदेश प्रेम का विकास

भारतेन्दु का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि उन्होने हिन्दी साहित्य को, और उसके साथ समाज को साम्राज्य-विरोधी दिशा में बढ़ने की प्रेरणा दी।[8] १८७० में जब कविवचनसुधा में उन्होने लॉर्ड मेयो को लक्ष्य करके 'लेवी प्राण लेवी' नामक लेख लिखा तब से हिन्दी साहित्य में एक नयी साम्राज्य-विरोधी चेतना का प्रसार आरम्भ हुआ। ६ जुलाई १८७४ को कविवचनसुधा में लिखा कि जिस प्रकार अमेरिका उपनिवेशित होकर स्वतन्त्र हुआ उसी प्रकार भारत भी स्वतन्त्रता लाभ कर सकता है। उन्होने तदीय समाज की स्थापना की जिसके सदस्य स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की प्रतिज्ञा करते थे। भारतेन्दु ने विलायती कपड़ों के बहिष्कार की अपील करते हुए स्वदेशी का जो प्रतिज्ञा पत्र 23 मार्च, 1874 के 'कविवचनसुधा' में प्रकाशित किया, वह समूचे हिंदी समाज का प्रतिज्ञा पत्र बन गया। उसमें भारतेंदु ने कहा था,

> *हमलोग सर्वान्तिर्यामी, सब स्थल में वर्तमान, सर्वद्रष्टा और नित्य सत्य परमेश्वर को साक्षी देकर यह नियम मानते हैं और लिखते हैं कि हम लोग आज के दिन से कोई विलायती कपड़ा न पहिरेंगे और जो कपड़ा कि पहिले से मोल ले चुके हैं और आज की मिती तक हमारे पास हैं उनको तो उनके जीर्ण हो जाने तक काम में लावेंगे पर नवीन मोल लेकर किसी भाँति का भी विलायती कपड़ा न पहिरेंगे, हिंदुस्तान का ही बना कपड़ा पहिरेंगे। हम आशा रखते हैं कि इसको बहुत ही क्या प्रायः सब लोग स्वीकार करेंगे और अपना नाम इस श्रेणी में होने के लिए श्रीयुत बाबू हरिश्चंद्र को अपनी मनीषा प्रकाशित करेंगे और सब देश हितैषी इस उपाय के बाद में अवश्य उद्योग करेंगे।*

सबसे पहले भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने ही साहित्य में जन भावनाओं और आकांक्षाओं को स्वर दिया था। पहली बार साहित्य में 'जन' का समावेश भारतेन्दु ने ही किया। उनके पहले काव्य में रीतिकालीन प्रवृत्तियों का ही बोलबाला था। साहित्य पतनशील सामन्ती संस्कृति का पोषक बन गया था, पर भारतेन्दु ने साहित्य को जनता की गरीबी, पराधीनता, विदेशी शासकों के अमानवीय शोषण के चित्रण और उसके विरोध का माध्यम बना दिया। अपने नाटकों, कवित्त, मुकरियों और प्रहसनों के माध्यम से उन्होंने अंग्रेजी राज पर कटाक्ष और प्रहार किए, जिसके चलते उन्हें अंग्रेजों का कोपभाजन भी बनना पड़ा।

भारतेंदु अंग्रेजों के शोषण तंत्र को भली-भांति समझते थे। अपनी पत्रिका कविवचनसुधा में उन्होंने लिखा था –

> *जब अंग्रेज विलायत से आते हैं प्राय: कैसे दरिद्र होते हैं और जब हिंदुस्तान से अपने विलायत को जाते हैं तब कुबेर बनकर जाते हैं। इससे सिद्ध हुआ कि रोग और दुष्काल इन दोनों के मुख्य कारण अंग्रेज ही हैं।*

यही नहीं, 20वीं सदी की शुरुआत में दादाभाई नौरोजी ने धन के अपवहन (ड्रेन ऑफ वेल्थ) के जिस सिद्धान्त को प्रस्तुत किया था, भारतेन्दु ने बहुत पहले ही शोषण के इस रूप को समझ लिया था। उन्होंने अपनी विरचित बहुचर्चित और सुविख्यात कविता 'भारत-दुर्दशा में लिखा था –

> *अंगरेजी राज सुखसाज सजे अति भारी, पर सब धन विदेश चलि जात ये ख्वारी।*

अंग्रेज भारत का धन अपने यहां लेकर चले जाते हैं और यही देश की जनता की गरीबी और कष्टों का मूल कारण है, इस सच्चाई को भारतेंदु ने समझ लिया था। कविवचनसुधा में उन्होंने जनता का आह्वान किया था–

> *भाइयो! अब तो सन्नद्ध हो जाओ और ताल ठोक के इनके सामने खड़े तो हो जाओ। देखो भारतवर्ष का धन जिसमें जाने न पावे वह उपाय करो।"*

भारत की सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिए प्रयत्न

१९७६ में भारत सरकार ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी की स्मृति में एक डाक-टिकट जारी किया

भारतेन्दु की वैश्विक चेतना भी अत्यन्त प्रखर थी। उन्हें अच्छी तरह पता था कि विश्व के कौन से देश कैसे और कितनी उन्नति कर रहे हैं। इसलिए उन्होने सन् १८८४ में बलिया के दादरी मेले में 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है' पर अत्यन्त सारगर्भित भाषण दिया था। यह लेख उनकी अत्यन्त प्रगतिशील सोच का परिचायक भी है। इसमें उन्होने लोगों से कुरीतियों और अंधविश्वासों को त्यागकर अच्छी-से-अच्छी शिक्षा प्राप्त करने, उद्योग-धंधों को विकसित करने, सहयोग एवं एकता पर बल देने तथा सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होने का आह्वान किया था। ददरी जैसे धार्मिक और लोक मेले के साहित्यिक मंच से भारतेंदु का यह उद्बोधन अगर देखा जाए तो आधुनिक भारतीय सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक चिंतन का प्रस्थानबिंदु है। भाषण का एक छोटा सा अंश देखिए-

> *हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि इनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नालियों से जो ताराग्रह आदि बेध करके उनकी गति लिखी*

है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीन बनी है उनसे उन ग्रहों को बेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या के और जनता की उन्नति से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंगरेज फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमी पहले छू लें। उस समय हिन्दू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको औरों को जाने दीजिए जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देख करके भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायेगा फिर कोटि उपाय किये भी आगे न बढ़ सकेगा। इस लूट में इस बरसात में भी जिसके सिर पर कम्बख्ती का छाता और आँखों में मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उन पर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

विचारों की स्पष्टता और उसे विनोदप्रियता के साथ किस तरह प्रस्तुत किया जा सकता है, इसका यह निबन्ध बेजोड़ उदाहरण है। देखिए, किस तरह भारत की चिंता इस निबन्ध में भारतेंदु व्यक्त करते हैं,

बहुत लोग यह कहैंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती बाबा, हम क्या उन्नति करैं? तुम्हरा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनकी बहुत भूल है। इंगलैंड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से पेट भरा, दूसरे हाथ से उन्नति की राह के कांटों को साफ किया।

वास्तव में उनका यह लेख भारत दुर्दशा नामक उनके नाटक का एक तरह से वैचारिक विस्तार है। भारत दुर्दशा में वे कहते हैं,

रोअहुं सब मिलिकै आवहुं भारत भाई।
हा, हा ! भारत दुर्दशा देखी न जाई॥

भारतेन्दु अच्छी तरह समझ चुके थे कि 'अंग्रेजी शासन भारतीयों के लाभ के लिए है' यह पूर्णतः खोखला दावा था और दुष्प्रचार था। अँग्रेज किस तरह भारत की संपदा लूट रहे थे, इसका संकेत भारतेन्दु ने 'कविवचनसुधा' के 7 मार्च, 1874 के अंक में अपनी टिप्पणी में दिया,

सरकारी पक्ष का कहना है कि हिंदुस्तान में पहले सब लोग लड़ते-भिड़ते थे और आपस में गमनागमन न हो सकता था। यह सब सरकार की कृपा से हुआ। हिंदुस्तानियों का कहना है कि उद्योग और व्यापार बाकी नहीं। रेल आदि से भी द्रव्य के बढ़ने की आशा नहीं है। रेलवे कंपनी वाले जो द्रव्य व्यय किया है, उसका व्याज सरकार को देना पड़ता है और उसे लेने वाले बहुधा विलायत के लोग हैं। कुल मिलाकर 26 करोड़ रुपया बाहर जाता है।

भारतेन्दु **स्त्री-पुरुष की समानता** के इतने बड़े पैरोकार थे कि 'कविवचनसुधा' के 3 नवंबर, 1873 के अंक में उन्होंने लिखा,

यह बात सिद्ध है कि पश्चिमोत्तर देश की कदापि उन्नति नहीं होगी, जब तक यहाँ की स्त्रियों की भी शिक्षा न होगी क्योंकि यदि पुरुष विद्वान होंगे और उनकी स्त्रियाँ मूर्ख तो उनमें आपस में कभी स्नेह न होगा और नित्य कलह होगी।

भारतेन्दु ने अपने 'सत्य हरिश्चन्द्र नाटक' का समापन इस भरत-वाक्य से किया है-

खलगनन सों सज्जन दुखी मत होइ, हरि पद रति रहै।
उपधर्म छूटै सत्व निज भारत गहै, कर-दुःख बहै॥
बुध तजहिं मत्सर नारि-नर सम होंहिं, सब जग सुख लहै।
तजि ग्राम कविता सुकवि जन की अमृत बानी सब कहैं॥

इन्हें भी देखें

- भारतेन्दु मंडल
- हिंदी
- हिन्दी साहित्य
- हिन्दी कवि
- हिन्दी नवजागरण

सन्दर्भ

1. Lāla, Vaṃśīdhara (1989). *Bhāratīya svatantratā aura Hindī patrakāritā* (https://books.google.co.in/books?id=nQIlAAAAMAAJ&newbks=0&hl=en&redir_esc=y) . Bihāra Grantha Kuṭīra. "भारतेन्दु युग चारण थे । उनकी पत्रिकाओं में भारतीयों के हृदय की धड़कन सुनायी पड़ती है । अंग्रेजी - राज्य में जनता की गुलामी के बन्धन और उनके शोषण की उन्होंने सच्ची तस्वीर खींची । उन्होंने अंग्रेजों के तथाकथित न्याय , जनतंत्र और उनकी सभ्यता का पर्दाफाश किया । उनके इस कार्य की सराहना करते हुए डा ० रामविलास शर्मा ने लिखा- ' देश के रूढ़िवाद का खंडन करना और महंतों , पंडे - पुरोहितों की लीला प्रकट करना निर्भीक पत्रकार हरिश्चन्द्र का ही काम था ।"
2. नाटक का इतिहास (http://forum.janmaanas.com/viewtopic.php?f=51&t=111) Archived (https://web.archive.org/web/20131224101420/http://forum.janmaanas.com/viewtopic.php?f=51&t=111) 2013-12-24 at the वेबैक मशीन। जनमानस-एक हिन्दी मंच। २ अक्टूबर २००९। अजय सिंह
3. विलक्षण प्रतिभा के धनी भारतेन्दु (http://hindi.webdunia.com/miscellaneous/literature/remembrance/0805/07/1080507057_1.htm) Archived (https://web.archive.org/web/20080905112938/http://hindi.webdunia.com/miscellaneous/literature/remembrance/0805/07/1080507057_1.htm) 2008-09-05 at the वेबैक मशीन। वेबदुनिया। स्मृति जोशी
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र (http://www.anubhuti-hindi.org/dohe/bhartendu.htm) Archived (https://web.archive.org/web/20060929115503/http://www.anubhuti-hindi.org/dohe/bhartendu.htm) 2006-09-29 at the वेबैक मशीन (अनुभूति पत्रिका)
5. हिन्दी साहित्य कोश भाग-२ (नामवाची शब्दावली) पृ-409
6. भारतेन्दु हरिश्चन्द और 'निज भाषा' छत्तीसगढ़ी (http://www.srijangatha.com/LokAlok_Mar2k7) Archived (https://web.archive.org/web/20111011142106/http://www.srijangatha.com/LokAlok_Mar2k7) 2011-10-11 at the वेबैक मशीन|लोक-आलोक। १९ दिसम्बर २००९। नंदकिशोर शुक्ल
7. "भारतेंदु और भाषा की जड़ें" (https://web.archive.org/web/20180426012211/https://samalochan.blogspot.in/2017/10/blog-post_30.html) . मूल (https://samalochan.blogspot.in/2017/10/blog-post_30.html) से 26 अप्रैल 2018 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2018.

8. परम्परा का मूल्यांकन (पृष्ठ २५) (https://books.google.co.in/books?id=1f8QchIYuEcC&printsec=frontcover#v=onepage&q&f=false) Archived (https://web.archive.org/web/20180909185642/https://books.google.co.in/books?id=1f8QchIYuEcC&printsec=frontcover#v=onepage&q&f=false) 2018-09-09 at the वेबैक मशीन (डॉ रामविलास शर्मा)

बाहरी कड़ियाँ

- युग प्रवर्तक : भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (https://web.archive.org/web/20160422100218/http://www.pravasiduniya.com/%e0%a4%af%e0%a5%81%e0%a4%97-%e0%a4%aa%e0%a5%8d%e0%a4%b0%e0%a4%b5%e0%a4%b0%e0%a5%8d%e0%a4%a4%e0%a4%95-%e0%a4%ad%e0%a4%be%e0%a4%b0%e0%a4%a4%e0%a5%87%e0%a4%a8%e0%a5%8d%e0%a4%a6%e0%a5%81-%e0%a4%b9) (प्रवासी भारतीय)
- भारतेंदु हरिश्चंद्र अनुभूति में (https://web.archive.org/web/20060929115503/http://www.anubhuti-hindi.org/dohe/bhartendu.htm)
- भारतेंदु हरिश्चंद्र : हिन्दी गद्य के पुरोधा (https://web.archive.org/web/20160305120507/http://hindikechirag.blogspot.com/2008/08/blog-post_30.html) (हिन्दी के चिराग)
- भारतेन्दु हरिश्चंद्र की रचनाएँ कविता कोश में (https://archive.today/20130112231619/http://www.kavitakosh.org/kk/index.php?title=%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%87%E0%A4%82%E0%A4%A6%E0%A5%81_%E0%A4%B9%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%B6%E0%A5%8D%E0%A4%9A%E0%A4%82%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%B0)
- भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा (https://web.archive.org/web/20121215041955/http://books.google.co.in/books?id=fDNhpziFWXQC&printsec=frontcover#v=onepage&q&f=false) (गूगल पुस्तक ; लेखक - डॉ राम विलास शर्मा)
- हर कालखंड में चौंकाते रहे भारतेंदु हरिश्चन्द्र (https://web.archive.org/web/20110103082426/http://vichar.bhadas4media.com/sahitya-jagat/518-2010-09-09-14-38-49.html)
- राष्ट्रीय चेतना के वाहक भारतेन्दु हरिश्चंद्र (https://web.archive.org/web/20160728051152/http://dainiktribuneonline.com/2010/09/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%80%E0%A4%AF-%E0%A4%9A%E0%A5%87%E0%A4%A4%E0%A4%A8%E0%A4%BE-%E0%A4%95%E0%A5%87-%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%B9%E0%A4%95-%E0%A4%AD/)
- भारतेन्दु की इतिहास दृष्टि (https://web.archive.org/web/20131216232648/http://samalochan.blogspot.in/2012/09/blog-post_9.html) (समालोचन)
- भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है (https://web.archive.org/web/20150317022216/http://www.hindisamay.com/contentDetail.aspx?id=4725&pageno=1) (भारतेंदु हरिश्चंद्र का बलिया व्याख्यान (सन १८८४, बलिया का ददरी मेला)